The International Journal of Advanced Research In Multidisciplinary Sciences
(IJARMS)
Volume 2 Issue 2, 2019

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी का विकास एवं स्वरूप

डॉ0 कौशलेन्द्र सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
पटेल श्री टीकाराम पी0जी0 कॉलेज,
साईं बगदाद मल्लवॉ, हरदोई (उ0प्र0)

सन्दर्भ

नई कहानी के विकास के साथ–साथ कहानी के आन्दोलन होने लगे। आन्दोलनों के कारण कहानी का एक स्थिर रूप न रह सका। अकहानी, सचेतन कहानी, समान्तर कहानी आदि धाराओं में कहानी विभक्त हो गयी।

स्वतन्त्रता के पश्चात् देश की समस्याएं बदलने लगीं। देश का यथार्थ एक नये रूप में सामने आया। स्वातंत्र्योत्तर कहानी इस नव यथार्थ और नव परिवेश को पकड़ने में सक्षम रही। देश की समस्याओं, जटिलताओं और यथार्थ की भयावहता को नयी पीढ़ी के कहानीकारों ने भोगा और समझा तथा अपनी कहानियों में प्रतिबद्ध किया। स्वतंत्रता के बाद की कहानी स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी कहलाई।

आज का परिवेश पूरी तरह से बदल चुका है। आज के कहानीकारों में स्वभावतः यथार्थवादी दृष्टि विकसित हुयी है। यह नयी दृष्टि बदलते हुए परिवेश से उपजी है। स्वतन्त्रता के बाद का यथार्थ निश्चित पुराने समय के यथार्थ से भिन्न है। आज के समय की समस्याएँ यथार्थ और संवेदनाएँ, स्वतन्त्रता–पूर्व से अलग हैं। औद्योगिकीकरण यांत्रिकी यातायात के साधनों, शहरी सभ्यता, आधुनिक शिक्षा, रेडियो और अखबार की पहुँच, सिनेमा आदि के प्रभाव के जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया है। नयी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों ने नयी चेतना को जन्म दिया है। इसी अभिनव चेतना को कथाकारों ने अपने कथा साहित्य में उभारा है।

नई कहानी के विकास के साथ–साथ कहानी के आन्दोलन होने लगे। आन्दोलनों के कारण कहानी का एक स्थिर रूप न रह सका। अकहानी, सचेतन कहानी, समान्तर कहानी आदि धाराओं में कहानी विभक्त हो गयी।

भारत को चिर प्रतीक्षित आजादी तो प्राप्त हुई, परन्तु विभाजन के फलस्वरूप विस्थापितों के भोजन और आवास की समस्या देश के लिए प्रश्न चिन्ह के रूप में उपस्थित हुई। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से ही देश आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त खोखला हो गया था–यद्यपि यह युद्ध भारत की धरती पर नहीं लड़ा गया था, फिर भी युद्ध जनित मंहगाई और विषमताएं भारत को कम–ज्यादा रूप में इंग्लैंड या अन्य किसी युद्धरत देश की भाँति झेलनी पड़ी। स्वतन्त्रता से पूर्व पड़े दुर्भिक्षों के कारण भारत की स्थिति अत्यन्त दयनीय एवं क्षीण हो गयी थी। वैसे ही देश का आर्थिक ढांचा चरमराया हुआ था–शरणार्थियों की समस्या ने राष्ट्र के सामने एक बहुत बड़ा संकट[1] पैदा कर दिया। देश के सामने कई समस्याओं का समूह मुंह बाये खड़ा था–शासन–तन्त्र और सेना अत्यन्त जर्जरित स्थिति में थे, यातायात के साधनों की कमी थी, देशी रियासतों का प्रश्न संकट पैदा कर रहा था। कश्मीर को हड़पने के लिए पाकिस्तान ने आक्रमण कर दिया था। इस युद्ध के दौरान भयंकर नर–हत्या, लूट–खसोट, आगजनी और भुखमरी आदि की घटनाएं घटित हुई।

देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ और सुव्यवस्थित करने के लिए सम्यक् योजनाओं की आवश्यकता महसूस हो रही थी, इसलिए सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं का सुनियोजित कार्यक्रम तैयार किया। इन पंचवर्षीय योजनाओं के अनुसार देश के कार्य शुरू कर दिये गये। योजनाओं के जैसे लक्ष्य थे–उनमें सफलता नहीं मिली। देश की प्रगति तो हुई– लेकिन आंशिक रूप से। देश की जनसंख्या बढ़ती रही–वैसी उत्पादन में वृद्धि नहीं हुई। देश की जनता ने सुख–समृद्धि के जो सपने देखे थे, वे धूमिल पड़ते गये। देश की योजनाएं कागजी सिद्ध होती गई। सदियों से अभावग्रस्त देश के विभिन्न वर्गों में छीना–झपटी, लूट–खसोट का वातावरण उत्पन्न हो गया। सम्बन्धों में शिथिलता आई, अपनत्व का भाव समाप्त होता गया। भाई चारा एक खोखला नारा मात्र रहा गया। स्वार्थ के रिश्ते बढ़ते गये–सब रिश्तों के मूल में स्वार्थ निहित हो गया। धन सर्वोपरि हो

गया। जो सम्पन्न थे, वे अपने साधनों, शक्ति एवं प्रभाव के कारण और भी अधिक सम्पन्न और समृद्ध होते गये। जो गरीब और सुविधा रहित थे, वे और भी अधिक विपन्न होते गये। सामान्य और मध्य वर्ग का व्यक्ति देश में बढ़ती हुई मंहगाई और असुविधाजनित परिस्थितियों के बीच पिसने लगा।

सत्य, अहिंसा का लोप होने लगा– सर्वत्र, झूठ, भ्रष्टाचार और हिंसा का साम्राज्य हो गया। देश के नेता ही देश के भक्षक और शोषक बन गये। अफसरवादिता ने देश के आर्थिक व सामाजिक ढांचे को और भी अधिक कमजोर कर दिया। नैतिकता का स्थान, कालाबाजारी, रिश्वत और घूसखोरी ने ले लिया।[2] आज देश में सफलता की कुंजी रिश्वत मानी जाती है। बिना रिश्वत दिये हुए बड़े लोगों के काम भले ही हो जाएं–मध्य वर्ग और निम्न वर्ग के काम इसके बिना अधूरे रह जाते हैं। मध्य वर्ग अपने मिथ्याभिमान और मिथ्याडम्बर से दबा हुआ अपना जीवन कष्ट में काटा रहा है। निम्न मध्यवर्ग की देश में दुर्गति हो रही है। प्रान्तीयवाद, जातिवाद और साम्प्रदायिकता का डेरा देश के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक फैला हुआ है। छोटी जाति और बड़ी जाति की लड़ाइयाँ गाँव के क्षेत्रों में अधिक हो रही हैं। जाति–संघर्ष में खून की होली खेली जा रही है।

देश में शिक्षित बेरोजगारों की संख्या बढ़ रही है। आज का नवयुवक परिवेशजनित असन्तोष्ज्ञ से बिखर गया है। उसमें बेरोजगारी के कारण भग्नाशा, कुण्ठा, घुटन, पीड़ा आदि भाव पैदा हो गए है। 'आज का व्यक्ति आर्थिक दबाव और यन्त्रणाओं से गुजर रहा है। वर्तमान समाज में पाये जाने वाला सन्त्रास बोध, कुण्ठा, भविष्यहीनता और असुरक्षा से उत्पन्न हुआ है।[3] आजादी से पहले जनता अधिक खुशहाल थी–आज आजाद होकर भी परतन्त्र है। आजादी के बाद जितनी लूट हुई है, 'उतनी तो उन आक्रमणकारियों के जमाने में भी नहीं हुई थी, जिन्हें हमने अपने इतिहास में टांक रखा है।[4] देश में पारस्परिक कलह, प्रान्तीयता, जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद तथा सांप्रदायिकता को फैलाने वाले तथा बढ़ावा देने वाले देश के राजनीतिज्ञ हैं।

उद्योगों के विकास ने शहरी जीवन और पूंजीवाद को विकसित किया है। औद्योकीकरण के कारण नगरों ओर महानगरों की संख्या में दिन–प्रतिदिन बढ़ोत्तरी हो

रही है। गाँव में अधिकांश कृषक मजदूर हो गए हैं। गाँवों में बड़े कृषकों द्वारा शोषित खेतिहर मजदूर अब आजीविका की तलाश में गाँव छोड़कर शहरों में बसने लगे हैं या नित्य प्रति गाँवों से शहर आते–जाते हैं। इन मजदूरों का शोषण शहरों में पूंजीपति लोग कर रहे हैं।

औद्योगिक विकास ने ग्रामीण व्यवस्था को छिन्न–भिन्न कर दिया है। औद्योगीकरण, यांत्रिकी, आधुनिक शिक्षा, बेरोजगारी, जनसंख्या, भोजन–आवास आदि ने संयुक्त परिवार को विघटित कर दिया है। शहरों में या गाँवों में असमान आय के कारण परिवार विश्रृंखलित होते जा रहे हैं। आजकल की विषम परिस्थितियों में व्यक्ति अपने को असहाय, अकेला और टूटा महसूस कर रहा है।

भारत में वैज्ञानिक विकास भी तीव्र गति से हो रहा है। जन–जीवन से सम्बन्धित आवश्यकताओं और सुविधाओं की पूर्ति हेतु वैज्ञानिक उपकरण सुलभ है। उद्योग–धन्धे सभी वैज्ञानिक कलों के काधार पर ही चल रहे हैं। बड़े–बड़े कारखाने–मिलें केवल विज्ञान द्वारा निर्मित मशीनों पर प्रश्रित हैं। खेती के उत्पादन को बढ़ाने हेतु आधुनिक यंत्र और रासायनिक खादें अब सहजता से सुलभ हैं। भारत में चिकित्सा विज्ञान काफी प्रोन्नति पर चल रहा है। अब दुस्साध्य रोगों के उपचार वैज्ञानिक उपकरणों द्वारा भारत में ही हो जाता है–लेकिन इस तरह का उपचार केवल धनाड्यों के लिए ही है–गरीबों के लिए नहीं।

अणुशक्ति की दृष्टि से भारत दुनिया का छठा राष्ट्र है। भारत का विकास हर दृष्टि से हुआ है, फिर भी बहुत–सी आवश्यक वस्तुओं और धन के लिए हमें विदेशों के आगे हाथ फैलाने पड़ते हैं– ''किसी ने हमें उधार और दान, पैसा दिया है, किसी ने गेहूँ और चावल, कोई हमें टेक्नीकल मदद, मशीनें और माल देता है, कोई विशेषज्ञ भेजता है, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक डेलीगेशनों का तो जैसा तांता ही बन्ध गया है।[5]

अब नारी पुरातन युग से चली आई दासी, चरण–सेविका, भोग्या, पतिव्रता नहीं रह गई है, अपितु अब सहचरी और अर्द्धांगिनी है। अब प्रत्येक क्षेत्र में नारी पुरुष की समता कर रही है। अब पुरुष नारी को दबाकर नहीं अपितु समझौतें के रूप में ही जीवन यापन कर रहा है।

'परिवर्तित स्वातंत्र्योत्तर परिवेश में सम्बन्धों में जटिलता, टूटन एवं तनाव परिलक्षित हो रहा है। सम्बन्धों का मुख्य सेतु अब स्वार्थ रह गया है। आज का व्यक्ति अवसंगति का शिकार है–वह अवसंगति और व्यर्थता–बोध से पीड़ित है।'[6]

धर्म और नैतिकता के बंधन भी समाज के ढीले हुए। एक समय तो ऐसा भी आया कि राजनीतिक ही धर्म का विकल्प बन गयी क्योंकि विश्व स्तर पर राजनीति के माध्यम से मानव मुक्ति की चिंता को बल मिला। किन्तु हुआ इसके विपरीत। राजनीति मूल्यहीन हो गयी और धर्म अंधविश्वास का पर्याय बन गया। अध्यात्म लोगों को ढकोसला लगने लगा। भारत–विभाजन की त्रासदी ने सभी मानवीय मूल्यों को चकनाचूर कर दिया था। समाज एक प्रकार से दिम्भ्रमित हो उठा। समाज को पाश्चात्य जीवन पद्धति ही अनुकरणीय प्रतीत हुई, अतः 'आज का भारतीय एक लंबी दासता के बाद स्वातंत्र्योततर काल में जीवन जीने के बावजूद दास मनोवृत्ति का ही शिकार है और पश्चिमी आचार–व्यवहार को अधिक गर्व से देखता है। अपनी उपयोगी भारतीय परंपराऐं भी उसे अपमानजनक प्रतीत होती है।'[7]

कहने का तात्पर्य यह है कि समस्त वैज्ञानिक तथा भौतिक प्रगति के बावजूद भारतीय जीवन स्वातंत्र्योत्तर काल में गरीबी, बेरोजगारी, सामाजिक, मूल्यहीनता, जड़ता का शिकार रहा है क्योंकि 'भ्रष्टाचारी, अत्याचारी, विलासप्रिय नकली चेहरों तथा मुखौटों को सत्ता मिली, जनता के हिस्से लगी बेवसी, कातरता, गरीबी और उदासीनता।'[8]